**ओ३म्**

**‘मनुष्य जीवन का अन्तिम व महानतम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

संसार में ईश्वर की बहुत चर्चा होती है। घोर अज्ञानी व्यक्ति भी ईश्वर को मानता है और परम्परा से प्राप्त ज्ञान के अनुसार ईश्वर की उपासना वा उसकी पूजा करता है, भले ही उसका वह कृत्य यथार्थ उपासना न होकर अन्धविश्वास व पाखण्डपूर्ण कृत्य ही क्यों न हो। महर्षि दयानन्द भी गुजरात में एक पौराणिक ब्राह्मण परिवार में सन् 1825 में जन्में थे। घर पर पिता शिव के उपासक थे और पौराणिक परम्परा के अनुसार अपने इष्ट देव शिव की पूजा व उपासना करते थे। 14 वर्ष की आयु में दयानन्द जी को शिवरात्रि के दिन मूर्तिपूजा की निस्सारता का बोध हुआ तो उन्होंने मूर्तिपूजा व शिवोपसना करना छोड़ दिया था। वह सच्चे ईश्वर की खोज में लग गये। 18 वर्ष की आयु में वह घर छोड़ कर चले गये और साधु, संन्यासियों वा योगियों से ईश्वर विषयक यथार्थ ज्ञान व प्राप्ति के उपाय जानने के लिए ज्ञानियों व योगियों की खोज करते रहे। मथुरा में आर्ष संस्कृत व्याकरण के आचार्य दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती से तीन वर्ष सन् 1860-1863 संस्कृत व्याकरण एवं वैदिक ज्ञान प्राप्त कर वह वेद के विद्वान बन गये। योग के चरम लक्ष्य असम्प्रज्ञात समाधि को वह वर्षों पूर्व ही सिद्ध कर चुके थे। गुरु स्वामी विरजानन्द जी की शिक्षा से कुछ वर्षों बाद वह पूर्ण वेदज्ञ बन गये और वेदों व संसार के सभी रहस्यों को जानकर वैदिक परम्परा के सच्चे ऋषि और आप्त पुरुष की श्रेणी में उन्होंने स्थान प्राप्त कर लिया।

 स्वामी दयानन्द जी को घोर तप, उपासना व साधना से ईश्वर व जीवात्मा का जो स्वरूप विदित हुआ उसे उनके सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, आर्याभिविनय, संस्कारविधि सहित आर्योद्देश्यरत्नमाला वा स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश आदि ग्रन्थों के माध्यम से जाना जा सकता है। स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश में ईश्वर के विषय में वह बताते हैं कि ईश्वर वह है कि जिसके ब्रह्म व परमात्मा आदि नाम हैं, जो सच्चिदानन्दादि लक्षणयुक्त है, जिसके गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हैं, जो सर्वज्ञ, निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा, अनन्त, सर्वशक्तिमान, दयालु, न्यायकारी, सब सृष्टि का कर्ता, धर्ता, हर्ता, सब जीवों को कर्मानुसार सत्य न्याय से फलदाता आदि लक्षणयुक्त है। उसी को ऋषि दयानन्द परमेश्वर मानते वा स्वीकार करते थे। जीवात्मा के विषय में स्वामी दयानन्द जी लिखते हैं कि जो इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख और ज्ञानादि गुणयुक्त, अल्पज्ञ, नित्य है, वह **‘‘जीव”** कहलाता है।

 जीवात्मा अत्यन्त सूक्ष्म सत्ता है जो जन्म-मरण धर्मा है। जन्म का कारण पूर्वजन्म के शुभ व अशुभ कर्म होते हैं और भावी जीवन का आधार वर्तमान जन्म व जीवन के शुभाशुभ कर्म होते हैं जिनका भोग शेष रहता है। मनुष्य जन्म लेता है तो गर्भ में उसे पीड़ा होती है। जन्म के बाद भी अनेकानेक दुःख आते जाते रहते हैं। शरीर का धर्म भी सुख व दुःख ही है। संसार में ऐसा कोई मनुष्य नहीं हुआ जो जीवन में कभी शारीरिक रोगों सहित आधिदैविक, आधिभौतिक व आध्यात्मिक दुःखों से पीड़ित न हुआ हो। जीवात्मा इन सभी दुःखों से मुक्ति चाहता है। उसे दुःखों से मुक्ति कैसे मिल सकती है? इसके लिए दुःखों का कारण जानना आवश्यक है। शास्त्रों की सहायता से विचार करने पर दुःखों का कारण **‘‘अविद्या”** सिद्ध होती है। अविद्या का अर्थ अज्ञान ले सकते हैं। जब मनुष्य की अविद्या दूर हो जाती है तो वह विद्वान हो जाता है। विद्वान का अर्थ है कि जीवन विषयक सभी प्रकार की अच्छी व बुरी बातों का सम्यक् ज्ञान। इसका अर्थ यह होता है कि वह ईश्वर के सत्य स्वरूप को भी जानता है और उसकी उपासना के साधनों व विधि को भी। इससे उसे क्या लाभ होंगे यह भी जानता है। अविद्या से मुक्त होने पर वह विद्या को प्राप्त होता है और अवैदिक, अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड के कार्यों से बच जाता है। अविद्या के दूर होने से उन कार्यों जिससे उसे दुःख प्राप्त होता था व हो सकता है, उसे जान लेने पर वह उन्हें नहीं करता और उससे होने वाले दुःखों से उसकी रक्षा होती है। अब यदि वह अशुभ कर्म वा काम नहीं करेगा तो उसे शुभ कर्मों का फल सुख कर्म-भोग के रूप में ही प्राप्त होगा। उसका भावी जन्म जब होगा तो उसे दुःख नाम मात्र को होंगे और सुख अधिकाधिक मात्रा में प्राप्त होंगे। यह स्थिति मनुष्य योनि में श्रेष्ठ अवस्था प्राप्त होने पर ही सम्भव होती है जिसका अनुमान हम समाज में अनेक सुखी लोगों को देखकर कर सकते हैं।

 वेदों व वैदिक साहित्य में ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना सहित देवयज्ञ अग्निहोत्र करने आदि का भी विधान है जिसके लिए महर्षि दयानन्द जी ने पंचमहायज्ञविधि पुस्तक लिखी है। अब यदि मनुष्य प्रातः व सायं विधि विधान के अनुसार ईश्वर का ध्यान लगाकर सन्ध्या व उसकी स्तुति, प्रार्थना व उपासना करता है तो इसका फल अनुमान से जाना जा सकता है। सन्ध्या के समापन से पूर्व समर्पण मन्त्र में ईश्वर से धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्रार्थना की जाती है। इसका अर्थ है कि सन्ध्या करने से मनुष्य को धर्म, अर्थ व काम सहित मोक्ष की प्राप्ति भी होती है। योग का वास्तविक तात्पर्य भी सन्ध्या करना व ध्यान करते हुए समाधि अवस्था को प्राप्त करना ही होता है। धर्म, अर्थ व काम का सम्बन्ध इस जन्म से है जबकि मोक्ष का सम्बन्ध मृत्यु के बाद जन्म व मरण से अवकाश से है। जन्म व मरण से अवकाश का अर्थ पुनर्जन्म में बाधा व मृत्यु के बाद जन्म न होना है। इसकी प्राप्ति ईश्वर ही कराता है अतः इसे ईश्वर से ही मांगा जाता है। अब प्रश्न यह है कि ईश्वर मोक्ष किसको देता है। इसका भी सीधा व सरल उत्तर यह है कि मोक्ष उसके पात्र व्यक्ति को ही ईश्वर देगा, पात्रता से रहित मनुष्य को तो मोक्ष का मिलना सम्भव नहीं है। इस पात्रता के विषय में भी ऋषि दयानन्द ने शास्त्रों व अपने विवेक से सत्यार्थप्रकाश के नवम् समुल्लास में विस्तारपूर्वक लिखा है। मुक्ति वा मोक्ष के साधनों के बारे में स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश में संक्षेप से लिखते हुए ऋषि दयानन्द बताते हैं कि ईश्वरोपासना अर्थात् योगाभ्यास, धर्मानुष्ठान, ब्रह्मचर्य से विद्याप्राप्ति, आप्त विद्वानों का संग, सत्यविद्या, सुविचार और पुरुषार्थ आदि साधनों को प्रयोग में लाना ही मुक्ति के साधन हैं। इन साधनों का सम्यक् रीति से व्यवहार करने से मुक्ति वा मोक्ष प्राप्त होता है जिसका स्वरूप ऋषि दयानन्द के शब्दों में **‘‘सब दुःखों से छूटकर बन्धनरहित सर्वव्यापक ईश्वर और उसकी सृष्टि में स्वेच्छा से विचरना (बिना मनुष्य शरीर, जीवात्मा रूप में), नियत समय पर्यन्त मुक्ति के आनन्द को भोग के पुनः संसार में आना।”**

मुक्ति में जीवात्मा को जो आनन्द मिलता है वह आनन्दस्वरूप ईश्वर के सान्निध्य मे ईश्वर की कृपा से मिलता है। इसे समाधि के आनन्द से जाना जा सकता है। समाधिस्थ योगी घण्टों भूख प्यास पर विजय पाकर आनन्द रस में मग्न रहता है। वह किसी से भौतिक वस्तुओं की अपेक्षा नहीं रखता। घंटों समाधि लगाने पर यथासमय पुनः पुनः समाधि का लाभ करता है। इसका कारण यही है कि उसे समाधि अवस्था में ईश्वर के जिस आनन्द की प्राप्ति होती है वह उससे इतर संसार के किसी भी भौतिक सुख देने वाले पदार्थों में नहीं मिलती। समाधि के सुख के समान व उससे भी कुछ अधिक सुख मोक्ष अवस्था में जीव प्राप्त करता है। इसी का उपदेश ईश्वर ने वेद में और ऋषियों ने शास्त्रों में किया है। मोक्ष एक तर्क व युक्ति सिद्ध जीवात्मा की अवस्था है जिसका प्रत्यक्ष हमारे प्राचीन ऋषियों ने किया और उसका वर्णन उपनिषदों व दर्शन आदि ग्रन्थों में किया है। संसार के सभी मनुष्यों का उद्देश्य जीवन में धर्म, अर्थ व काम की प्राप्ति और मृत्यु के बाद मोक्ष की प्राप्ति है। इसका निर्देश वेद व वैदिक साहित्य में पदे पदे मिलता है। महर्षि दयानन्द ने भी समस्त वैदिक साहित्य का मन्थन करके मोक्ष प्राप्ति के साधनों का विधान संसार के सभी मनुष्यों के लिए अपने ग्रन्थों में सरल हिन्दी भाषा में करके विश्व के लोगों का महान उपकार किया है।

 हमने संक्षेप में मोक्ष पर ऋषि ग्रन्थों के आधार पर कुछ विचार दिये हैं। हम पाठकों से निवेदन करते हैं कि उन्हें इस विषय को ऋषि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों में पढ़ना चाहिये। यह अति गूढ़ ज्ञान अन्यत्र दुर्लभ है। यही जीवन का उद्देश्य व लक्ष्य है। इसके पाने के बाद कुछ भी प्राप्त करना शेष नहीं रहता। यदि इस जन्म में इसे प्राप्त नहीं किया तो समझिये हमने अपनी बहुत बड़ी हानि की है। इसी के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**